IJRAR.ORG E-ISSN: 2348-1269, P-ISSN: 2349-5138
INTERNATIONAL JOURNAL OF RESEARCH AND ANALYTICAL REVIEWS (IJRAR) | IJRAR.ORG
An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

पंडित दीनदयाल उपाध्याय का शैक्षिक एव सामाजिक चिंतन

[1]विनय कुमार [2]मनीषा गुप्ता
[1]रिसर्च स्कॉलर [2]असिस्टेंट प्रोफेसर
[1]महात्मा ज्योतिबा फुले रोहिलखंड विश्वविद्यालय , बरेली
[2]नॉर्थ इंडिया कॉलेज ऑफ हायर एजुकेशन, नजीबाबाद

शोध सार: शिक्षा सीखने की सुविधा, या ज्ञान, कौशल, मूल्यों, नैतिकता, विश्वास, आदतों और व्यक्तिगत विकास के अधिग्रहण की प्रक्रिया है। शैक्षिक विधियों में शिक्षण, प्रशिक्षण, कहानी सुनाना, चर्चा और निर्देशित अनुसंधान शामिल हैं। शिक्षा अक्सर शिक्षकों के मार्गदर्शन में होती है हालाँकि, शिक्षार्थी स्वयं को शिक्षित भी कर सकते हैं। शिक्षा औपचारिक या अनौपचारिक सेटिंग्स में हो सकती है, और कोई भी अनुभव जो किसी के सोचने, महसूस करने या कार्य करने के तरीके पर रचनात्मक प्रभाव डालता है, उसे शैक्षिक माना जा सकता है। शिक्षण की पद्धति को शिक्षाशास्त्र कहा जाता है। शिक्षा सुधारों के लिए आंदोलन हैं, जैसे कि छात्रों के जीवन में प्रासंगिकता की दिशा में शिक्षा की गुणवत्ता और दक्षता में सुधार और आधुनिक या भविष्य के समाज में बड़े पैमाने पर कुशल समस्या समाधान, या साक्ष्य आधारित शिक्षा पद्धतियों के लिए। शिक्षा के अधिकार को कुछ सरकारों और संयुक्त राष्ट्र द्वारा मान्यता दी गई है। वैश्विक पहल का उद्देश्य सतत विकास लक्ष्य को प्राप्त करना है, जो सभी के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा को बढ़ावा देता है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय आधुनिक भारत के सबसे प्रतिष्ठित राष्ट्रवादी राजनीतिक विचारकों में से एक हैं, जिन्होंने सिद्धांतों के बजाय उन चीजों और मुद्दों पर बहुत बात की, जिनके लिए बहुत अधिक सार्वजनिक जागरूकता की आवश्यकता थी। महात्मा गांधी के बाद, वह शायद समकालीन समय के एकमात्र भारतीय दार्शनिक हैं जिन्होंने अपनी सोच के सभी सिद्धांतों को भारतीय संस्कृति और ज्ञान परंपरा से ही आत्मसात किया है। गांधी की तरह उन्होंने सनातन परंपराओं से विचारों को उठाया और अपने पूरे जीवन को उस उद्देश्य के लिए समर्पित करने वाली जनता की भलाई के लिए काम किया, जिसमें उनका विश्वास था। एकात्म मानववाद का उनका विचार उन्हें पूंजीवाद और साम्यवाद दोनों की विशाल समझ के साथ प्रदर्शनकारी रूप से अभूतपूर्व विचारक बनाता है। इन दोनों विचारधाराओं को स्वीकार करने के लिए विशाल तार्किक पृष्ठभूमि के साथ सुविधा प्रदान की और एक सर्वव्यापी भारतीय विकल्प के लिए अनुरोध किया, जिसने इस दशक के अंत में भाजपा की बहुमत वाली सरकार के बाद सार्वजनिक क्षेत्र में जगह पाई। एकात्म मानववाद अनिवार्य रूप से व्यक्ति और समाज और ब्रह्मांड के तालमेल और सर्वोच्च सत्ता में विश्वास करता है। उपाध्याय के अनुसार प्रत्येक राष्ट्र का अपना सांस्कृतिक और सामाजिक केंद्रीय विचार होता है जिसे चित्त कहा गया है और प्रत्येक समाज में कुछ खासियत होती हैं जिन्हें विराट के रूप में पहचाना जा सकता है। प्रत्येक व्यक्ति की अलग–अलग भूमिकाएँ होती हैं और गतिविधियों के विभिन्न आयाम होते हैं। मानव जीवन के इन अलग–अलग पहलुओं को एक दूसरे के साथ निरंतर बातचीत में एकीकृत करना समग्र मानवतावाद का सार है। उन्होंने भविष्य को ध्यान में रखते हुए प्राचीन भारतीय पारंपरिक ज्ञान प्रणाली का प्रस्ताव रखा जो दुनिया की समकालीन जरूरतों के लिए काफी प्रासंगिक है। यही कारण है कि वैश्वीकरण के इस युग में भी उनके लेखन की पर्याप्त प्रासंगिकता है। प्रस्तुत लेख में पंडित दीनदयाल उपाध्याय और उनकी कृतियों का एक संक्षिप्त जीवन रेखाचित्र प्रदान करने का प्रयास किया जा रहा है।

मूल शब्दः शिक्षा, राष्ट्रवादी, मानववाद, राजनीतिक, आंदोलन।

प्रस्तावना

शिक्षा एक व्यक्ति को जीवन भर ज्ञान प्राप्त करने और आत्मविश्वास के स्तर में सुधार करने में मदद करती है। यह हमारे करियर के विकास के साथ–साथ व्यक्तिगत विकास में भी बहुत बड़ी भूमिका निभाता है। इसकी कोई सीमा नहीं हैय किसी भी आयु वर्ग के लोग कभी भी शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। यह हमें अच्छी और बुरी चीजों के बारे में पता लगाने में मदद करता है। दुनिया में कुछ ही लोग ऐसे होते हैं जिनकी पढ़ाई में कोई दिलचस्पी नहीं होती है। शिक्षक, माता–पिता, स्कूल प्रशासक, शिक्षा मंत्री, विधायक और अन्य लोग अक्सर इस शब्द का प्रयोग करते हैं। शिक्षा शब्द का प्रयोग आदिकाल से ही किसी न किसी रूप में किया जाता रहा है। भारतीय प्राचीन शिक्षा में, भारत विचारों के इतिहास में सबसे बड़ा स्थान रखता है। भारत में प्राचीन शिक्षा से लेकर आधुनिक शिक्षा तक कई प्रणालियाँ हैं। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन, डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम, चाणक्य, स्वामी दयानंद सरस्वती, रवींद्र नाथ टैगोर और पंडित दीनदयाल उपाध्याय जैसे कई शिक्षाविद हुए हैं जिन्होंने भारतीय शिक्षा को वैश्विक मंच पर स्थान दिलाया हैं। पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने भारतीय शिक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने अपना पूरा जीवन शिक्षा के विकास के लिए समर्पित कर दिया। पंडित दीन दयाल उपाध्याय का जन्म सोमवार, 25 सितंबर, 1916 (अश्विन कृष्ण त्रयोदशी संवत 1973) को उत्तर प्रदेश के मथुरा जिले के चंद्रबन के नगला गाँव में ब्रज के पवित्र

क्षेत्र में हुआ था। सनातन धर्म के हिंदू घराने में जन्म होने के कारण उनका बचपन सामान्य उत्तर भारतीय निम्न मध्यम वर्गीय परिवार में बीता। उनके पिता भगवती प्रसाद, जो स्वयं एक ज्योतिषी होने के साथ–साथ जलेसर में सहायक स्टेशन मास्टर थे, एक महान ज्योतिषी, पंडित हरिराम उपाध्याय के पोते थे। उनकी माता श्रीमती रामप्यारी एक समर्पित धार्मिक महिला थीं। एक ज्योतिषी ने उनकी कुंडली का अध्ययन करते हुए भविष्यवाणी की थी कि उनका लड़का एक महान विद्वान और विचारक, एक निस्वार्थ कार्यकर्ता और एक प्रमुख राजनेता बन जाएगा–लेकिन वह शादी नहीं करेगा। वह निश्चित रूप से एक गहन दार्शनिक (एक उत्कृष्ट आयोजक और उच्च पेशेवर मानक के साथ व्यक्तिगत अखंडता के नेता) वैचारिक मार्गदर्शन का एक उज्ज्वल प्रकाश और उच्च नैतिक क्षमताओं वाला इंसान बन गए।

जब वह सात–आठ साल के थे, तब डकैतों ने उनके घर पर धावा बोल दिया, डकैत से नीचे तड़पते हुए दीनदयाल ने धीरे से कहा, ''हमने सुना है कि डकैत अमीरों को ही लूटते हैं और गरीबों की रक्षा करते हैं,'' बच्चे की निडरता से प्रभावित होकर डकैत घर लूटे बिना लौट आए।. जुलाई 1925 के दौरान दोनों बच्चों को शिक्षा के लिए राजस्थान के गंगापुर भेज दिया गया। 1929 में अगस्त दीनदयाल सातवीं कक्षा तक की शिक्षा के लिए राजस्थान के कोटला गए। 1932 में वे वहां से आठवीं और नौवीं कक्षा पास करके राजस्थान के अलवर जिले के राजगढ़ चले गए।

पंडित दीन दयाल उपाध्याय का जीवन दुर्भाग्य से कठिन और भीषण रहा है, लेकिन अपने परेशानी भरे निजी जीवन के बावजूद, उन्होंने हमेशा अपने शिक्षाविदों में बहुत अच्छा प्रदर्शन किया। उनकी बौद्धिक उपलब्धियां असंख्य और प्रशंसनीय थीं। अपनी उच्च शिक्षा के लिए दीनदयाल कानपुर गए और अंग्रेजी साहित्य में कला स्नातक की पढ़ाई के लिए सनातन धर्म कॉलेज में दाखिला लिया। वहाँ कॉलेज के छात्रावास में सुंदर सिंह भंडारी और बलवंत महाशब्दे से उनकी दोस्ती हो गई, जिनके आग्रह पर उन्होंने आर.एस.एस. 1937 में, जहां वे डॉ. हेडगेवार (आर.एस.एस. के संस्थापक) के संपर्क में आए और धीरे–धीरे संगठन की गतिविधियों के लिए समय देना शुरू कर दिया। प्रथम श्रेणी के साथ स्नातक उत्तीर्ण करने के बाद वे अंग्रेजी साहित्य में स्नातकोत्तर करने के लिए आगरा के सेंट जॉन कॉलेज गए, उन्होंने अपने चाचा राधा रमन के आग्रह पर प्रशासनिक सेवा परीक्षा सफलतापूर्वक दी। इंटरव्यू के दौरान धोती, कुर्ता और टोपी पहनने को लेकर उनका मजाक उड़ाया गया था। यह पहली बार था जब उन्हें पंडितजी कहा गया, हालांकि बाद में उनके जीवन में उनके अनुयायियों द्वारा स्नेह के साथ इसका इस्तेमाल किया गया था। प्रशासनिक सेवा में चुने जाने के बाद भी उन्होंने सरकारी सेवाओं में शामिल होने से इनकार कर दिया क्योंकि उन्हें सरकार की सेवा करने में कोई दिलचस्पी नहीं थी और एक बड़ी खोज उनका इंतजार कर रही थी। एक करीबी चचेरे भाई की मौत ने कथित तौर पर उन्हें निराशा में डाल दिया और बाद में उन्होंने अपनी मास्टर डिग्री अधूरी छोड़ दी।

अत्यधिक पीड़ा और अभाव की परिस्थितियों में होने के बावजूद जो किसी भी सामान्य इंसान की आत्मा को कुचल सकता है, दीनदयाल ने प्रकृति द्वारा दी गई नकारात्मक शक्तियों और कष्टों से शक्ति प्राप्त करते हुए एक अद्वितीय व्यक्तित्व विकसित किया। उनका जीवन इस बात का प्रतिबिंब प्रदान करता है कि कैसे एक व्यक्ति अपने दृढ़ संकल्प के माध्यम से अपनी परिस्थितियों से ऊपर उठ सकता है।

दीनदयाल को एक मेधावी छात्र होने के कारण नौकरी और आरामदायक जीवन जीने के कई अवसर प्राप्त हुए, हालाँकि उनके चाचा चाहते थे कि उनकी शादी हो जाए। प्रशासनिक पद छोड़ने के बाद, उन्हें एक उच्च माध्यमिक विद्यालय में प्रधानाध्यापक की पेशकश भी की गई थी। बापू–राव मोघे लिखते हैं, "जब दीनदयाल ने दिलचस्पी नहीं दिखाई तो स्कूल समिति ने सोचा कि शायद शुरुआती वेतन उनके लिए पर्याप्त नहीं था। इसलिए उन्हें शुरुआत में तीन या चार वेतन वृद्धि की पेशकश की गई थी।" हालाँकि, दीनदयाल ने उल्लेखनीय रूप से उत्तर दिया, "मेरी फिर से दो धोती, दो कुर्ते और एक दिन में दो भोजन हैं। इसके लिए मुझे महीने के तीस रुपये से ज्यादा की जरूरत नहीं है। आपके द्वारा प्रदान किए गए सभी धन का मैं क्या करूंगा? "यह घटना उनके जोरदार और सरल दृष्टिकोण का प्रमाण है, लेकिन उनकी निस्वार्थता और बलिदान की असाधारण भावना भी है। दुनिया में ऐसे कुछ लोग पैदा हुए हैं जिन्होंने अपनी जरूरतों पर महारत हासिल कर ली है और उनके अस्तित्व के लिए केवल शारीरिक जरूरतें मायने रखती हैं क्योंकि वे जीवन में बहुत अधिक लक्ष्य में लगे हुए हैं, वे जीते हैं लेकिन दूसरों के लिए। उनके करियर के सभी अवसर हमें आर.एस.एस. के उद्देश्य से उनके स्पष्ट व्यक्तिगत जुड़ाव पर विश्वास करने के लिए प्रेरित करता है। जिसमें वह अपने कॉलेज के दिनों से ही सक्रिय रूप से लगे हुए हैं। दीनदयाल ने लिखा, "मैं भी पहले तो किसी स्कूल में नौकरी करने और साथ ही साथ उस स्थान के संघ कार्य में भाग लेने के बारे में सोच रहा था। जब मैं लखनऊ आया तो मैं उसी तर्ज पर सोच रहा था"। उन्होंने आगे कहा, ''लेकिन लखनऊ में मैं वर्तमान स्थिति का अध्ययन करने और आगे के काम के विशाल क्षेत्र का एक विचार बनाने में सक्षम था, और मुझे सलाह मिली कि एक विशेष शहर में काम करने के बजाय मुझे पूरे जिले में काम करना होगा। . इसी तरह सुप्त हिंदू समाज में उपलब्ध कार्यकर्ताओं की कमी को पूरा करना होगा।"

दीनदयाल उस समय देश में पहले से मौजूद परिस्थितियों से बहुत परेशान थे। उन्होंने देखा कि हमारा समाज कमजोर हो गया है, नैतिकता से रहित यह स्वार्थ की बाहों में डूब गया है। हर कोई अपने बारे में अकेला सोचने को प्रवृत्त है और अपने निजी हितों में डूब रहा है। समय की आवश्यकता पर जोर देते हुए उन्होंने कहा, ''आज, हाथ में भीख का कटोरा लिये, समाज हमसे भिक्षा मांग रहा है। यदि हम इसकी मांगों के प्रति उदासीन बने रहे तो एक दिन ऐसा आ सकता है जब हमें पंडित दीन दयाल उपाध्याय के जीवन और कार्यों को एक बहुत बड़ा सौदा देना होगा जिसे हम सबसे ज्यादा प्यार करते हैं। " देश को मजबूत करने और उसे बहादुर, मजबूत और समृद्ध बनाने का एकमात्र तरीका समाज को आर.एस.एस. के विचारों और सिद्धांतों पर संगठित करना है। उन्होंने अपना पूरा जीवन संगठन के काम और मिशन के लिए समर्पित कर दिया और नौकरी की सुरक्षा, स्थायी करियर, व्यक्तिगत उपलब्धियों और परिवार के निर्माण की कीमत पर भी इसे अपने जीवन कि प्राथमिकता और उद्देश्य बना लिया।

दीनदयाल विदेशी शासन के खिलाफ थे लेकिन राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम में महात्मा गांधी के नेतृत्व में भाग लेने से इनकार कर दिया। उन्होंने महसूस किया कि सर्वांगीण सामाजिक विकास का लक्ष्य केवल उत्साह और लगन से अपना जीवन संघ को समर्पित करने से ही पूरा होगा। शांति भूषण लिखते हैं, ''दीनदयाल हमेशा से अपना जीवन देश को समर्पित करना चाहते थे, क्योंकि उनका मानना था कि जब देश बंधन में था तब सरकारी नौकरी करने के बाद देश की सेवा संभव नहीं थी। इसलिए उन्होंने अपना जीवन देश की सेवा में

समर्पित कर दिया और इसके लिए उन्होंने आरएसएस के माध्यम को चुना।'' 1940 में, मुस्लिम कट्टरपंथी और मुस्लिम लीग मुसलमानों के लिए एक अलग राज्य की तीव्र मांग कर रहे थे। दीनदयाल ने विभाजन की मांगों का विरोध किया और मुस्लिम कट्टरवाद का मुकाबला करने और हिंदू समाज को एकीकृत करने के लिए काम किया। आरएसएस के संस्थापक डॉ हेडगेवार का 1940 में निधन हो गया। दीनदयाल ने माधव सदा–शिवराव गोलवलकर के नेतृत्व में काम किया। वर्ष 1942 से, उन्होंने खुद को आरएसएस को समर्पित कर दिया। उन्होंने आरएसएस में पूर्णकालिक काम, चालीस दिन की गर्मी की छुट्टी में भाग लिया।

आर.एस.एस. में संघ शिक्षा के दौर से गुजरते हुए नागपुर शिविर में, वे आरएसएस के आजीवन प्रचारक बने रहे। आर.एस.एस. में सफलतापूर्वक दो वर्ष का प्रशिक्षण पूरा करने के बाद, शिक्षा विंग लखीमपुर जिले में एक आयोजक के रूप में काम करने के बाद, 1955 में वे आर.एस.एस. के प्रांतीय आयोजक बने। उत्तर प्रदेश में उन्हें अनिवार्य रूप से एक आदर्श स्वयंसेवक के रूप में फिर से सम्मानित किया गया, क्योंकि उनके प्रवचन में संघ के शुद्ध विचार–धारा को दर्शाया गया था। उन्होंने आरएसएस में संगठनात्मक पदानुक्रम के विभिन्न पदों पर रहते हुए संगठन को मजबूत करने के लिए कड़ी मेहनत की। उन्होंने अपनी कड़ी मेहनत, समर्पण, पाप–पुण्यता, आयोजन कौशल, क्षमता, निष्ठा और प्रतिबद्धता के कारण ख्याति और प्रशंसा अर्जित की।

नानाजी देशमुख लिखते हैं, "दीनदयाल को बहुमुखी व्यक्तित्व का उपहार दिया गया था। वह एक असाधारण सफल आयोजक थे और लोगों को एक साथ रखने के लिए उनमें एक आदत थी। उत्तर प्रदेश में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के विकास में उनकी भूमिका बहुत महत्वपूर्ण थी।'' पवित्र सिद्धांतों को सामने रखने के लिए और वर्ष 1945 में हिंदुत्व राष्ट्रवाद की विचारधारा को फैलाने के लिए, उन्होंने लखनऊ, उत्तर प्रदेश में प्रकाशन गृह 'राष्ट्र धर्म प्रकाशन', स्थापित किया जहाँ से उन्होंने एक मासिक पत्रिका 'राष्ट्र धर्म' का शुभारंभ किया। बाद में 1948 में, एक साप्ताहिक 'पंच–जन्य' और 1949–50 में एक दैनिक 'स्वदेश' भी प्रकाशित हुआ, हालाँकि उन्होंने कभी भी प्रकाशन के किसी भी अंक में संपादक के रूप में अपना नाम नहीं छापा, यह उनका सरल स्वरूप था। मासिक, राष्ट्र धर्म का प्रकाशन लखनऊ से जारी है लेकिन दैनिक 'स्वदेश' को अब 'तरुण भारत' से बदल दिया गया है और लखनऊ से प्रकाशित किया गया है। दीनदयाल उपाध्याय ने 'सम्राट चंद्रगुप्त' और 'जगत गुरु शंकराचार्य' नामक दो पुस्तकें लिखीं, जो क्रमशः 1946 और 1947 में प्रकाशित हुए थे। बाद में उन्होंने कई दार्शनिक निबंधों और भाषणों में अपने विचार व्यक्त किए। दीनदयाल के अदम्य विचार एकात्म मानववाद, राष्ट्र जीवन की दिशा, भारतीय अर्थ नीति विकास की एक दिशा, अकंद भारत और मुस्लिम समय, हिंदू जैसी पुस्तकों और साहित्यिक कार्यों में निहित हैं। संस्कृति की विशिष्ट, अखंड भारत क्यों?, दो योजनाएं: वादे, प्रदर्शन, संभावनाएं, राष्ट्र जीवन की समय, राष्ट्रीय चिंतन, राजनीतिक डायरी, अवमूल्यनः एक महान पतन, उनकी राष्ट्रपति की विज्ञापन–पोशाक, आदि।

1947 में, जैसे ही भारत को स्वतंत्रता मिली, कांग्रेस ने सरकार का नेतृत्व किया। विचारों में मतभेद–कांग्रेस और आर.एस.एस. सामने आया और महात्मा गांधी की मृत्यु के बाद अत्यधिक खट्टा हो गया। सरकार ने आर.एस.एस. पर आरोप लगाते हुए जांच के आदेश दिए। महात्मा गांधी की हत्या का आरोप सिद्ध नहीं होने पर संगठन और उसकी गतिविधियों पर से प्रतिबंध हटा दिया गया।

अध्ययन का उद्देश्य

अध्ययन का मुख्य उद्देश्य श्री दीनदयाल उपाध्याय की शिक्षा में भूमिका का पता लगाने के लिए स्थापित किया गया है, इस अध्ययन के विभिन्न उद्देश्य हैं जो प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से इस अध्ययन से संबंधित हैं जैसेः

- श्री दीनदयाल उपाध्याय के जीवन पर प्रकाश डालने के लिए।
- भारत में शिक्षा के विकास में उनकी भूमिका का पता लगाने के लिए।
- आरएसएस संघ में उनकी भूमिका को उजागर करने के लिए।
- लोगों को उनके जीवन संघर्ष से परिचित कराया।

उपाध्याय का शिक्षा मे योगदान

शिक्षा का भारतीय दृष्टिकोण, 'सा विद्या या विमुक्त्य', शिक्षा को मनुष्य को मुक्त करने के तरीके के रूप में दर्शाता है। पंडित दीन दयाल उपाध्याय, इस रामबाण के महान समर्थक थे क्योंकि वे शिक्षा के माध्यम से मनुष्य के समग्र विकास में विश्वास करते थे। उपाध्याय जी स्वयं भी एक प्रतिभाशाली छात्र थेय उन्होंने अपने जीवन में कई छात्रवृत्तियां अर्जित कीं।

उपाध्याय जी ने 'एकात्म मानववाद' का एक महान दार्शनिक सिद्धांत प्रस्तुत किया, जिसे व्यक्ति के व्यक्तित्व के व्यापक विकास की रूपरेखा माना जा सकता है। उन्होंने प्रत्येक मनुष्य के शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा के निरंतर और एकीकृत कार्यक्रम को बढ़ावा दिया। भारतीय लोकाचार के अनुसार 'व्याष्टि', 'समष्टि', 'सृष्टि' और 'परमेष्ठी' का बोध उनके दर्शन का मूल है। शिक्षा इन प्रबुद्ध मूल्यों को महसूस करने का तरीका है।

उनके विचार में विदेशी प्रभाव, विदेशी विचारधारा और विदेशी जीवन–मूल्य किसी भी देश की प्रगति में बाधक होते हैं। भारतीय शिक्षा में अंग्रेजी मूल्यों को समाहित कर वर्तमान शिक्षा प्रणाली ने भारतीय राष्ट्र की आत्मा की अवहेलना की है और इसलिए उपाध्याय जी ने वर्तमान शिक्षा प्रणाली में बदलाव और शिक्षा में भारतीय मूल्यों को शामिल करने के लिए प्रोत्साहित किया। उनका मानना था कि शैक्षिक और जीवन–मूल्यों का विकास समाज के उद्देश्यों के अनुसार होता है। हम भारतीय समाज के रूप में अलग–अलग सामाजिक और नैतिक मूल्य–प्रणाली हैं और इसलिए हमारे छात्रों के लिए अपने प्रकार के मूल्यों और मूल्य–प्रणाली की आवश्यकता है।

उपाध्याय जी ने प्राचीन भारतीय दर्शन अर्थात धर्मः (धार्मिकता या कर्तव्य), अर्थः (धन या धन), कामः (इच्छा) और मोक्षः (मुक्ति या मोक्ष) में परिकल्पित चार पुरुषार्थों की दृष्टि का समर्थन किया। उनके विचार से मनुष्य तभी पूर्ण हो सकता है जब वह जीवन के चारों पुरुषार्थों को प्राप्त करने में सक्षम हो। केवल औपचारिक शिक्षा ही विद्यार्थियों के व्यापक व्यक्तित्व का विकास करने में सक्षम नहीं है। इसलिए, उन्होंने छात्रों के लिए औपचारिक स्कूली शिक्षा और अनौपचारिक संस्कार शिक्षा के समामेलन का समर्थन किया। शिक्षा मनुष्य को मनुष्य बनाती है। मानव निर्माण से समाज का निर्माण होता है और वही राष्ट्र निर्माण की ओर ले जाता है। उनका विचार था कि शिक्षा ऐसी परिस्थितियों का निर्माण करने में सक्षम होनी चाहिए जो छात्रों के बहुआयामी व्यक्तित्व का विकास करें। शिक्षा का रूप ऐसा होना चाहिए कि छात्र और समाज के बीच समन्वय का विकास हो और छात्र के भीतर अधिक से अधिक सामाजिक भावना का विकास हो क्योंकि अंततः छात्र को समाज और देश की प्रगति का वाहक बनना पड़ता है। उनके विचार में राष्ट्र का समग्र विकास समाज कल्याण से ही संभव है और समाज कल्याण का मूल माध्यम शिक्षा है।

उपाध्याय जी के शैक्षिक दर्शन का मूल मूल्य राष्ट्रवाद है। उनके विचारों में भारत न केवल देश की भौगोलिक एकता का प्रतिनिधित्व करता है, बल्कि विविधता में एकता को व्यक्त करते हुए जीवन के प्रति भारतीय दृष्टिकोण को भी दर्शाता है। इसलिए भारत हमारे लिए एक राजनीतिक नारा नहीं है जिसे हमने विशिष्ट परिस्थितियों के कारण अपनाया है, बल्कि यह हमारे संपूर्ण दर्शन की आधारशिला है। उन्होंने हमारी शिक्षा प्रणाली में पढ़ाए जाने वाले 'धर्म–शिक्षा' का भी समर्थन किया और भारतीय परिप्रेक्ष्य में धर्मनिरपेक्ष शिक्षा के विचार की उपेक्षा की। उनके लिए धर्म कर्मकांड नहीं बल्कि नैतिक कर्तव्य या धार्मिकता है।

उन्होंने शिक्षकों की गुणवत्ता पर भी ध्यान केंद्रित किया क्योंकि उनका दर्शन प्राचीन भारतीय भजन 'वयं राष्ट्रे जृयाम पुरोहिताः' पर प्रकाश डालता है। उनका विचार था कि पाठ्यक्रम को छात्रों के चरित्र के विकास सहित व्यक्तित्व के समग्र विकास की ओर उन्मुख होना चाहिए।

उपसंहार

समापन टिप्पणियों में कहा जा सकता है कि उपाध्याय जी का शैक्षिक दर्शन 21वीं सदी के मूल्यों यानी सामाजिक न्याय, व्यक्तिगत स्वतंत्रता, आर्थिक आत्म–निर्भरता, आत्म–नियंत्रण, आत्म–प्राप्ति, सतत विकास, सांस्कृतिक संरक्षण आदि को प्राप्त करने के लिए आज भी प्रासंगिक है। वह भारतीय संस्कृति और लोकाचार के बहुत बड़े प्रशंसक थे क्योंकि उन्होंने व्यक्त किया था कि ''अगर किसी को भारत की आत्मा को समझना है तो उसे इस देश को राजनीतिक या आर्थिक कोण से नहीं बल्कि सांस्कृतिक दृष्टिकोण से देखना चाहिए। 'भारतीयता' (भारत की राष्ट्रीयता) राजनीति के माध्यम से नहीं बल्कि संस्कृति के माध्यम से प्रकट हो सकती है। अगर हमारे पास कुछ भी है जो हम दुनिया को सिखा सकते हैं, तो वह सांस्कृतिक सहिष्णुता की भावना और कर्तव्य के प्रति समर्पित जीवन है।" (सुधाकर राजे द्वारा संपादित पुस्तक का अंश – ''पंडित दीनदयाल उपाध्यायः ए प्रोफाइल''।) अतः अंत में यह कहा जा सकता है की भारतीय शिक्षा प्रणाली में भारतीय संस्कृति की अभिव्यक्ति होनी चाहिए। हमारे सांस्कृतिक मूल्यों का संरक्षण और संवर्धन, शिक्षा का एक अनिवार्य हिस्सा होना चाहिए।

सन्दर्भ

1. https://hindi.news18.com/news/knowledge/deendayal-upadhyaya-birthday-know-why-panditji-was-so-popular-for-his-philosophy-viks-3762943.html
2. http://deendayalupadhyay.org/home.html
3. https://www.bhaskar.com/local/uttar-pradesh/mathura/news/two-day-seminar-on-the-birthday-of-pandit-deendayal-upadhyay-more-than-150-researchers-from-across-the-country-will-present-their-research-papers-in-the-seminar-128960775.html
4. https://en.wikipedia.org/wiki/Deendayal_Upadhyaya
5. Pandey, Deepak K. (25 May 2015). "Probe murder of Deendayal Upadhyaya afresh: Swamy". *The Hindu*. Retrieved 5 June 2018.
6. "Deen Dayal Upadhyaya, a swayamsevak, was pitchforked to lead Jana Sangh at a critical juncture in party's history", *indianexpress.com*,